SHODH SAMAGAM

ISSN : 2581-6918 (Online), 2582-1792 (PRINT)

इक्कीसवीं सदी की हिन्दी कहानियों मे बाजारवाद के प्रभाव का विवेचन

जय प्रताप सिंह, शोधार्थी,
शासकीय मानकुंवरबाई कालेज, जबलपुर, रानीदुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर, मध्यप्रदेश, भारत

ORIGINAL ARTICLE

Corresponding Author
जय प्रताप सिंह, शोधार्थी,
शासकीय मानकुंवरबाई कालेज, जबलपुर,
रानीदुर्गावती विश्वविद्यालय, जबलपुर,
मध्यप्रदेश, भारत

shodhsamagam1@gmail.com

Received on : 09/12/2021
Revised on : -----
Accepted on : 16/12/2021
Plagiarism : 00% on 09/12/2021

Plagiarism Checker X Originality Report
Similarity Found: 0%

Date: Thursday, December 09, 2021
Statistics: 0 words Plagiarized / 2053 Total words
Remarks: No Plagiarism Detected - Your Document is Healthy.

ÞbDdloha lnh dh fganh dgkfu;ksaescktkjokn ds çHkko dk foospuß 'kks/k funsZf'kdk 'kks/kkFkhZ M.-Jherh Le`fr 'kqDyk ¼çksQslj½ t; çrki flag ¼vfl-çksQslj½ 'kkldh;ekudqaojckbZdkysttcyiqjjkuhnqxkZorhfo`ofo|ky;] tcyiqje-ç- cht 'kCn&cktkjokn bDdloha lnh es fy[kh xbZ fgUnh dgkfu;ksaescktkjokn ,d egRoiw.kZ eqîk mHkjk gS orZeku lnh dh vusd fgUnh dgkfu;kacktkjokn dh =klnh ,oa foMEcuk dk ckjhd fo`ys"k.k djrh gS cktkjokn ,oa miHkksäkokn ds ifj.kkeLo;i vkt yksxksa dseu esa] thou esa ifjokjksa esa igys

शोध सार

इक्कीसवीं सदी मे लिखी गई हिन्दी कहानियों मे बाजारवाद एक महत्त्वपूर्ण मुद्दा बनकर उभरा है। बाजारवाद एवं उपभोक्तावाद के परिणामस्वरूप आज लोगों के मन में, जीवन में एवं परिवारों में पहले जैसी शान्ति एवं स्थिरता नहीं है। एक कोलाहल सा है। चारों तरफ एक शोर है। ऐसा प्रतीत होता है कि पूरा समाज, संपूर्ण मानवता दौड़ी जा रही है। बाजारवाद ने मनुष्य को ऐसा भ्रमित कर दिया है कि वह सदैव एक असंतोष भरा जीवन जीने को बाध्य है। वर्तमान सदी की अनेक हिन्दी कहानियां बाजारवाद की त्रासदी एवं विडम्बना का बड़ा बारीक विश्लेषण करती है। बाजार में रामधन (कैलाश वनवासी), पानी/2015 (सुषमामुनींद्र), क्विजमास्टर (पंकज मित्र), पड़ताल (पंकज मित्र), कंट्रोल ए डिलीट (आकांक्षा पारे काशिव), उस शहर में चार लोग रहते थे(नीलाक्षी सिंह), इकाई–दहाई (महेश कटारे), रद्दोबदल (मनोजरूपड़ा), न्यूड का बच्चा (क्षमा शर्मा), अंधेरा समुद्र (परितोष चक्रवर्ती), फूगाटी का जूता (मनीष वैद्य), सदी का महानायक उर्फ कूल–कूलतेल का सेल्समैन (पंकज सुबीर), टेलीविजन (भीमसेन त्यागी), कब्र का मुनाफा (तेजेन्द्र शर्मा) आदि। बाजार को केन्द्र में रखकर लिखी गई महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय कहानियाँ है। पहले बाजार हमारी आवश्यकताओ की पूर्ति पर आधारित था परन्तु आज बाजार नयी–नयी आवश्यकतायें पैदा करके व्यक्ति के ऊपर अपनी इच्छाओं को थोप रहा है। प्रस्तुत विषय में बाजारवाद के प्रभाव एवं बाजार के चारित्रिक विस्तार का विवेचन किया गया है।

मुख्य शब्द

इक्कीसवीं सदी, बाजार, बाजारवाद.

भारतीय मध्यवर्ग ने 'तैते पाँव पसारिये जैती लम्बी सौर' सूत्र को दरकिनार करते हुए 'ऋणकृत्वा घृत पीतेत'

जैसी सूक्ति को अपने जीवन का मूल मंत्र बना लिया है। बहुराष्ट्रीय कंपनियों ने 'आज खरीदो कल अदा करो' के सिद्धान्त को लोकप्रिय बनाकर बाजारवाद की जड़ों को और अधिक मजबूत किया है। बाजार पहले भी था लेकिन बाजारवाद नहीं था। बाजार हमारी स्थितियों एवं आवश्यकताओं पर निर्भर करता था, लेकिन आज बाजारवाद हमारी नियति निर्धारित करता है। इससे न तो दूर भागा जा सकता है और न अलग रहा जा सकता है। आज बाजारवाद ने अन्धी दौड़ की अन्तहीन यात्रा शुरू की है। इस दौड़ में जो शामिल है, वह भी चिंतित है एवं परेशान है और जो उसे केवल देख रहा है, वह भी दुःखी व परेशान है। बाजारवाद के कारण आज संतोष और सुख जैसे भाव समाप्त होते जा रहे हैं।

सुमन राजे के अनुसारः बाजार और बाजारवाद एक ही बात नहीं है, कहने का तात्पर्य है कि दोनों के बीच एक महीन रेखा है। बाजार तो हमेशा से मानव जीवन का अनिवार्य अंग रहा है जो हमारी आवश्यकताओं एवं उनकी पूर्ति पर आधारित है। आज समय एवं स्थतियो में बदलाव आ गया है। अब बाजारवाद का काम लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना नहीं है बल्कि उनमें नयी–नयी आवश्यकताएँ पैदा करके और फिर दूसरे विकल्प में अपने उत्पाद की श्रेष्ठता प्रतिपादित कर उनके लिए बाजार बनाना है।

इक्कीसवीं सदी की कहानियों में बाजारवाद के प्रतिरोध में बहुसंख्य कहानियाँ लिखी गयी। बाजार पहले भी था और अब भी है, लेकिन इक्कीसवी सदी में बाजार के प्रति आकर्षण बहुत अधिक बढ़ गया है। आज पूरा समाज बाजारवाद के गिरफ्त में है। इक्कीसवीं सदी में अनेक कहानीकारों ने अपनी कहानियों में बाजारवाद के बढ़ते प्रभुत्व के कारण उत्पन्न त्रासदी एवं विडम्बनाओं को बखूबी उद्घाटित किया है। इक्कीसवीं सदी की बहुसंख्य हिन्दी कहानियाँ बाजारवाद के प्रतिरोधमें सार्थक हस्तक्षेप करती है। उदाहरण के तौर पर कैलाश वनवासी की 'बाजार में रामधन' सुषमा मुनीन्द्र की पानी/2015, पंकजमित्र की 'क्विजमास्टर'एवं 'पडताल' मनीष वैद्य की 'फुगाटी का जूता', परितोष चक्रवर्ती की 'अंधेरा समुद्र', पंकज सुबीर की 'सदी का महानायक उर्फ कूल कूल तेल का सेल्स मैन,' मनोज रूपड़ा की 'रद्दोबदल', क्षमाशर्मा की 'न्यूड का बच्चा,' ललमुनिया मक्खी की 'छोटी सी कहानी', तेजेन्द्र शर्मा की 'कब्र का मुनाफा' आदि उल्लेखनीय कहानियाँ है।

कहानीकार 'कैलाश बनवासी' की 'बाजार में रामधन' कहानी बाजार को केन्द्र में रखकर लिखी गयी एक सशक्त एवं महत्त्वपूर्ण कहानी है। बाजार में रामधन सर्वथा भिन्न प्रकार की कहानी है, इसमें आदि से अन्त तक बाजार है। यह कहानी नई सदी में बाजार के बढ़ते प्रभुत्व एवं ताकत का बड़ी कुशलता से एहसास कराती है। बाजार किस तरह अपना कब्जा शहर के साथ–साथ गाँव में भी जमाता जा रहा है, इसे 'बाजार में रामधन' कहानी मे स्पष्टतः महसूस किया जा सकता है। 'बाजार में रामधन' कहानी में कहानीकार ने बड़ी कुशलता से बैल के माध्यम से घर, गाँव और निजी संबंधों में आ रहे बाजारवाद की अनिवार्यता को साकार करने का प्रयास किया है। सच तो यह है कि आज बाजारवाद उन चीजों पर प्रहार कर रहा है जो आपकी धरोहर और परंपरा रही हैं।

''मान लो अगर दाऊ या महाराज तुम्हे चार हजार दे रहे होते तो तुम क्या हमें बेच दिये होते, यह संवाद कैलाश बनवासी की कहानी 'बाजार में रामधन' का लगभग अंतिम संवाद है, जो बाजार से लौटते हुए बैलों से कहलवाया गया है। पशुओं को बोलना नहीं आता, यह सौभाग्य मनुष्य को ही मिला है, पर जब पशु बोलते हैं तो मनुष्यता पर बड़ा सवाल लगाते हैं। रामधन के बैल भी सामान्य नहीं हैं, उन्हें समाज और समाज को निगलता बाजार स्पष्ट दिखाई दे रहा है। वे बाजारवाद पर भाषण तो नहीं दे सकते लेकिन उसकी निर्मम अनिवार्यता से परिचय अवश्य कराते हैं।''[1]

बाजारवाद के विरोध में युवा पीढ़ी के कहानीकारों ने अनेक कहानियों लिखी हैं। उस क्रम में कथाकार पंकज मित्र की 'क्विजमास्टर' एक महत्त्वपूर्ण एवं उल्लेखनीय कहानी है। यह कहानी अपनी पूरी क्षमता के साथ बाजारवाद का प्रतिरोध करती है। बाजारवाद में किस तरह संतोष और सुख जैसे भाव समाप्त कर दिये है, इसका क्विज मास्टर कहानी बड़ा बारीक विश्लेषण करती है।

'पंकज सुबीर' की 'सदी का महानायक' उर्फ कूल–कूल तेल का सेल्समैन बाजारवाद के विरोध में लिखी एक रोचक कहानी है। बाजार किस तरह अपने उत्पाद मनुष्य की इच्छाओं पर थोप रहा है, उस पर यह कहानी बखूबी

प्रकाश डालती है। आज व्यक्ति बाजार के मायावी रूप को जानते हुए भी उस के अनुरूप चलने के लिए बाध्य है। मनीष वैद्य की कहानी 'फूगाटी का जूता' उदारीकरण एवं बाजारीकरण के कितने घातक परिणाम गाँव व देहात के कुशल कारीगरों को भुगतने पड़े है, इसका गहराई से पड़ताल करती है।

क्षमा शर्मा की कहानी–संग्रह 'नेम प्लेट' (2006) की कहानी 'न्यूड का बच्चा' बाजारवादी संस्कृति की मनःस्थिति को व्यक्त करती है। यह कहानी बाजारोन्मुखी जीवन प्रणाली का गहराई से पड़ताल करती है। कहानी की नायिका अत्यधिक धन कमाने की चकाचौंध में न्यूड फोटोग्राफी को अपनाने का निश्चय करती है। जिसका परिणाम यह होता है कि उसके शरीर का हर अंग विज्ञापन की भेंट चढ़ जाता है। नायिका के दाँतों पर टूथपेस्ट की टयूबे जगमगाने लगती है। उसके द्वारा प्रयोग की जाने वाली बिंदी, काजल, पाउडर, चूड़ी आदि सभी जगह विदेशी कंपनियाँ इठला रही है। नेलपालिश एवं क्रीम बनाने वाली कम्पनियाँ ऐसा नृत्य कर रही है मानों जैसे उनके बीच युद्ध छिड़ा हुआ हो।[2]

नयी सदी में स्त्री के देह को बाजार में खड़ा करके उसे बाजारवाद का नमूना बनाया ही गया है, साथ ही नारी मुक्ति का नाम देकर उसे बाजारवाद की भेंट भी चढ़ा दिया गया है।कथाकार 'महेश कटारे' ने 'इकाई–दहाई' कहानी में केन्द्रीय पात्र रामलखन के माध्यम से बाजारवादी मानसिकता को उजागर किया है। कथानायक की माँ, पत्नी और बच्चे तक बाजारवाद की परछाई से नहीं बच पाते है। आर्थिक रूप से कमजोर होने पर भी बाजारवादी मानसिकता से प्रभावित रामलखन को अपनी मां और पत्नी तक गन्दी व उबाऊ लगने लगती है और उसे ब्यूटी पार्लर भेजकर आधुनिक सौन्दर्य–प्रसाधनों से अपना शक्ल–सूरत बदलने की सलाह देता है।

इक्कीसवीं सदी की कहानियों पर विचार करें तो 'सुषमा मुनीन्द्र' की कहानी 'पानी/2015' बाजारवाद का चरम विस्फोट करती है। शहर में पानी की इतनी कमी हो गई है कि पीने के लिए भी नहीं है। कथा नायिका इशिता पानी के लिए आन्दोलन करने लगती है। जिसके फलस्वरूप उसे मल्टीनेशनल कंपनी की नौकरी से निकाल दिया जाता है लेकिन उसके जोरदार प्रदर्शन से सी.एम. की कुर्सी खतरे में पड़ जाती है: अफवाहे उड रही थी कि अगर शहर में पानी को लेकर इसी तरह आंदोलन होते रहे तो इंटरनेशनल मार्केट में शहर की इमेज खराब होगी। विदेशी कम्पनियां हाथ खींच लेगी। पानी के चक्कर में बहुत कुछ खो देंगे। विदेशी पानी बिकना है तो लोगों को समझाना सी० एम० का काम है। हवा तो यह भी उड़ रही थी कि कम्पनियों का प्रेशर है कि मामला नहीं सुलझता है तो सी. एम. को ही बदल डालों। सी. एम. को सामूहिक रूप से टीवी पर आकर बयान देना पड़ता है कि "हेल्थ के लिहाज से पानी साफ ही पीना चाहिए। हंड्रेड परसेन्ट शुद्ध पानी। वियर और वाइन ज्यादा पिए तो हेल्थ के लिए और भी अच्छा है। हमने बड़ी–बड़ी कम्पनियों के साथ एक छोटी सी स्कीम साइन की है। ''क्वालिटी सामान और शुद्ध पानी। आप ब्रान्डेड सामान खरीदिये साथ में पानी उपहार में लीजिए। भला इसमें एतराज क्यों हैं?''[3]

बाजारवाद का इससे अधिक घिनौना रूप भला क्या हो सकता है कि पीने का पानी तक आम जनता को नसीब नहीं और मुख्यमंत्री बहुराष्ट्रीय कम्पनियों से डील साइन कर रहे है कि सभी सामान ब्रांडेड खरीदो और साथ में पानी उपहार में पाओ।

'नीलाक्षी सिंह' की कहानी 'शहर में चार लोग रहते थे' इंडिया टुडे की साहित्य वार्षिकी (2002) में प्रकाशित हुई थी। यह कहानी एक व्यक्ति, उसकी पीड़ा और उसकी मजबूरियों को ही बाजार द्वारा उत्पाद में बदल दिए जाने की 'विडंबनाओं' को रेखांकित करती हैं।

बाजार बाहर से आकर्षक लेकिन भीतर से हिंसक एवं क्रूर होता है। नयी सदी में बाजार के स्वरूप में बड़ा बदलाव आया है। बाजार के इस चारित्रिक विस्तार को देखने के लिए पृथक–पृथक समय पर लिखी गयी हिन्दी की चार महत्त्वपूर्ण कहानियों–फणीश्वरनाथ रेणु की पंचलाइट, संजय खाती की 'पिंटी का साबुन' और पंकज मित्र' की 'पड़ताल' और आकांक्षा पारे की कंट्रोल ए डिलीट को एक साथ कर विचार किया जाये तो हमें प्रतीत होता है कि किस प्रकार बाजार अपने शुरुआती दिनों में हमारे मन में आकर्षण एवं कौतूहल के बीज रोपता है। बाजार के चरित्र की यह शुरुआती लक्षण रेणु की 'पंचलाइट' कहानी में उजागर होती है। किसी उत्पाद के पहली बार बाजार (समाज) में आने के बाद जो कौतूहल एवं आकर्षण हमारे अन्दर पैदा होता है वह शनैःशनैः कैसे एक प्रतिस्पर्धा का

रूप धारण कर लेता है उस पर 'पिंटी का साबुन' (संजय खाती) कहानी बखूबी प्रकाश डालती है। इस कहानी में एक ही घर के भीतर एक ऐसी स्पर्धा शुरू होती है, जो भाई–भाई के बीच मुकाबले की ऐसी लकीर खींच देता है कि उन्हें उस उत्पाद को प्राप्त करने के अतिरिक्त कुछ भी, यहां तक कि परिवार और संबंध भी नहीं दिखता और यही स्पर्धा जब व्यक्ति के भीतर और अधिक बढ़ जाती है तो वह इतना स्वार्थी व क्रूर हो जाता है कि उसे अपने किसी सगे संबंधी के मर जाने की भी कोई परवाह नहीं होती है। नयी सदी में बाजार के इस क्रूरतम रूप को पंकज मित्र की 'पड़ताल' कहानी में देखा जा सकता है। पंकज मित्र की पड़ताल कहानी इक्कीसवीं सदी में बाजार के हिंसक एवं अमानवीय रूप की पड़ताल करती है। प्रस्तुत कहानी में कथानायक किशोरी रमण बाबू अपने परिवार में रंगीन टीवी आने के ठीक आठ दिन बाद हृदयाघात से मर जाते है। इस कहानी में मनोरंजन का एक नया साधन टीवी अपने भीतर रोमांच एवं उत्सुकता का ऐसा लुभावना संसार लेकर आता है कि एक परिवार के सभी सदस्य मिलकर अपने ही परिवार के बुजुर्ग की नींद, चौन, सुख और उनकी निजता छीनकर उन्हें उपेक्षा की एक ऐसी अंधेरी सुरंग में धकेल देते है, जिससे उनकी मृत्यु तक हो जाती है। पड़ताल कहानी के पश्चात् लिखी गयी आकांक्षा पारे का शिव की 'कंट्रोल ए डिलीट' कहानी बाजार के हिंसक एवं क्रूर रूप का चित्रण करती हैं। अन्ततः हम कह सकते है कि उपरोक्त चारो कहानियां बाजार के बदलते चारित्रिक रूप को बड़ी कुशलता से उद्घाटित करती है।

तेजेन्द्र शर्मा की 'कब्र का मुनाफा' कहानी हमारे समय के बढ़ते बाजारवाद के दुष्प्रभाव को उजागर ही नहीं करती बल्कि हमारी संवेदनशीलता पर एक बड़ा सवाल भी उठाती है। बाजारवाद हमारे जीवन में शान्तिपूर्वक किस तरह तेजी से प्रवेश कर रहा है 'कब्र का मुनाफा' कहानी एक अच्छा उदाहरण पेश करती है। बाजारवाद की आंधी में हमारी मानवता, संवेदना का इतना अधिक क्षरण होगया है कि हम कब्र में भी अर्थात् मरने के पश्चात् भी मुनाफे की ही बात सोचें।

कहानीकार के शब्दों में : "उनका कहना है कि आपने साढ़े तीन सौ पाउण्ड एक कब्र के लिए जमा करवाए हैं, यानि कि दो कब्रों के लिए सात सौ पाउण्ड और अब इन्फलेशन की वजह से उन कब्रों की कीमत हो गई है ग्यारह सौ पाउण्ड यानी कि आपको हुआ है, कुल चार सौ पाउण्ड का फायदा।"[4]

जीवन में अर्थ का महत्त्व इतना अधिक बढ़ गया है कि व्यक्ति अपने संबंधों को, सामाजिक सरोकारों को भूलने लगा है। बाजारवाद के कारण यह समस्या और अधिक बढ़ती जा रही है। परितोष चक्रवर्ती की कहानी 'अंधेरा समुद्र' का अंधेरा बीसवीं सदी के बाद भारतीय समाज में छाये बाजारवाद, पूंजीवाद, बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की जोरदार प्रतिस्पर्धा, चमकीले एवं मायावी विज्ञापनों का अंधेरा प्रतीत होता है जिसमें आम इंसान कई कठिन पाटों के बीच बुरी तरह पिस रहा है।

निष्कर्ष

अतः हम कह सकते हैं कि आज बाजार का चरित्र अमानवीय, हिसंक एवं क्रूर होता जा रहा है, जो व्यक्ति और समाज के लिए घोर चिन्ता का विषय बन गया है। यदि समय रहते इस पर विचार नहीं किया गया तो इसके और भयावह एवं घातक परिणाम देखने को मिलेंगे।

सन्दर्भ सूची

1. पालीवाल सूरज, *इक्कीसवीं सदी का पहलादशक और हिन्दी कहानी,* वाणी प्रकाशन–नयी दिल्ली पृष्ठ–126।
2. श्रीवास्तव परमानन्द, *तद्भव,* 16
3. *कथादेश,* मई 2006, पृष्ठ–29
4. *हिन्दी चेतना,* अक्टूबर–दिसम्बर 2013, पृष्ठ–109।

****